श्रीमतेनिम्बार्कायनमः

वैष्णाव संस्कार कौस्तुभ

जिसको

श्री वैष्णवदास शास्त्रि ने

हिन्दी भाषा सहित संग्रह किया

और

महन्त श्रीब्रजमोहन शरणदेव जी

की द्रव्य सहायता से संशोधित कर प्रकाशित किया।

मिलने का पता—

श्री ब्रजमोहन शरण देवजी

श्रीराधाकान्त का मन्दिर,

विश्रामघाट, मथुरा।

प्रथम संस्करण १००० प्रतियां	ज्येष्ठ मास सम्वत् १९९१	मूल्य श्रीनिम्बार्कचरणरति

श्रीमतेनिम्बार्कायनमः

वैष्णव संस्कार कौस्तुभ

जिसको

श्री वैष्णवदास शास्त्रि ने

हिन्दी भाषा सहित संग्रह किया

और

महन्त श्रीब्रजमोहन शरणदेव जी

की द्रव्य सहायता से संशोधित कर प्रकाशित किया।

मिलने का पता—

श्री ब्रजमोहन शरण देवजी

श्रीराधाकान्त का मन्दिर,

विश्रामघाट, मथुरा।

प्रथम संस्करण १००० प्रतियां	ज्येष्ठ मास सम्वत् १९९१	मूल्य श्रीनिम्बार्कचरणरति

अग्रवाल एलेक्ट्रिक प्रेस, मथुरा में मुद्रित।

* श्रीमतेनिम्बार्कायनमः *

अथ भूमिका

भगवान् श्री सर्वेश्वर सर्व की बुद्धि के साक्षी होकर भावना के अनुकूल जीव को कार्य्य में प्रवृत करते हैं। आज काल विद्वान् और धन सम्पत्ति वाले दोनों लोकोपकार धर्म से उदासीन हैं। हजारों रुपया फजूल काम में लग जाने से क्लेश नहीं होता है जैसे धर्म में खर्च करने से क्लेश होता है। धर्म के काम कुछ करता है तो अपना अधिकार रखकर केवल लोक प्रसिद्धि के लिये और अपने पूर्वज के किया धर्म देव ब्राह्मणों को दिया भूमि आदि को फिर अपने दखल कर लेता है और अन्यकादिआ या उसका मालिक अपने शरीर से उपार्जन किया है उसको अपने हाथ लगा लेता है इस तरह करने से अपने और अपने पूर्वजों को नरक में ले जाता है। दान किया एक गौ भूलकर पास आजाने से राजा नृग को कृकलास गिरगिट बनना पड़ा।

श्रीकृष्ण जीने कहा है, भागवत दशम उत्तरार्ध ६४ अध्याय में, नृग राजा के मोक्ष करने बाद।

नाहं हलाहलं मन्ये विषं यस्य प्रतिक्रिया।
ब्रह्मस्वं हि विषं प्रोक्तं नास्य प्रति विधि र्भुवि॥ ३३॥

भाषा—श्रीकृष्णजी कहते हैं कि, मैं हलाहल विष को विष नहीं मानता हूं, क्यों कि हलाहल विष खाने पर औषध से विष दूर हो सकता है। देव ब्राह्मण के धन हलाहलविष कहा है उस विष को खाने पर विष उतरने का उपाय भूमि में मैं नहीं देखता हूं॥ ३३॥

हिनस्ति विषमत्तारं वह्निरद्भिःप्रशाम्यति।
कुलं समूलं दहति ब्रह्म स्वारणि पावकः॥ ३४॥

भाषा—विष खाने से विष खाने वाला मनुष्य को मार देता है, मकान में अग्नि लगने से जलसे अग्नि ठण्डी हो जाती है। देव ब्राह्मणके

धन रूप जंगल अग्नि है कुल को जड़ से जला देती है। भावयह है कि जंगल में वासके रगड़ होने से अग्नि उत्पन्न होकर जंगल मात्र को जड़ से जला देती है, तैसे देव ब्राह्मण को धन दिया जङ्गल के अग्नि तुल्य है फिर लेने से कुल रूप जङ्गल को जड़ से जला देती है कुल में कोई दिवा बारने को नहीं रहता है, इसलिये देव ब्राह्मण के धन हाथ नहीं लगाना ॥ ३४ ॥

ब्रह्मस्वं दुरनुज्ञातं भुक्तं हन्ति त्रिपूरुषम् ।
प्रसह्य तुबलाद्भुक्तं दशपूर्वान्दशापरान् ॥ ३५ ॥

भाषा—देव ब्राह्मण के धन छिनकर भोग करने से तीन के नाश करता है। छिनने वाला को और दश पीडी पहले दश पीढ़ी पीछे कुलका ॥ ३५ ॥

राजानोराजलक्ष्म्यान्धानात्मपातंविचक्षते ।
निरयंयेऽभिमन्यन्ते ब्रह्मस्वं साधु बालिशाः ॥ ३७ ॥

भाषा—राज्य लक्ष्मी से अन्धे राजावों का आत्मा का गिरना नरक में होता है। जो कि अल्प बुद्धि वाले देव ब्राह्मण के धन हरण करना अच्छा समझते हैं ॥ ३६ ॥

गृह्णन्ति यावतः पांसून् क्रन्दन्ता मश्रुबिन्दवः ।
विप्राणां हृतवृत्तीनां बदान्यानां कुटुम्बिनाम् ॥ ३७ ॥

भाषा— जिन ब्राह्मणोंके जमीन धन हरण होगयाहै उसके रोदन से जितने नेत्र से विन्दु जमीन में पड़ते हैं ॥ ३७ ॥

राजानो राजकुल्याश्च तावतोऽब्दान्निरङ्कुशाः ।
कुम्भीपाकेषु पच्यन्ते ब्रह्मदायापहारिणः ॥ ३८ ॥

भाषा—उतने वर्ष स्वतन्त्र देव ब्राह्मण भाग हरण करने वाले राजा और राजाके मन्त्री आदि कुम्भी पाक नरक में रहते हैं ॥ ३८ ॥

स्वदत्तां परदत्तां वा ब्रह्मवृत्तिं हरेच्चयः ।
षष्ठि वर्ष सहस्राणि विष्टायां जायते कृमिः ॥ ३९ ॥

भाषा—अपना दिया वा अन्य का दिया देव ब्राह्मण के धन जमीन जो छीन लेताहै वह ६० हजार वर्ष विष्ठा में कीडा होताहै।।३६।।

न मे ब्रह्मधनं भूयाद्यद्गृध्वाऽल्पायुषो नृपाः ।
पराजिताश्चुता राज्याद्भवन्त्युद्वेजिनोऽहयः ॥ ४० ॥

भाषा—श्री कृष्ण जी कहते हैं कि देव ब्राह्मण के धन मेरे कोन होवे । जिसके लोभकर राजा अल्पायु हो जाते हैं और पराजित, राज्य से भ्रष्ट होजाते हैं ॥ ४० ॥

जो अपना कल्याण चाहै तो इस श्री कृष्ण वचनको माने । और प्रत्येक व्यक्ति को उचित है कि छल राजस तामस त्याग कर शुद्ध सात्विक प्रवृत्ति निवृत्ति धर्म करै जिसको जैमा अधिकार होय । दोनों धर्म के साधन पंच संस्कार हैं । इन संस्कारों के देखाने वाला निम्बार्क सम्प्रदा में सदाचार स्वधर्मामृत सिंधु गुरु नति वैजन्ति ग्रन्थ विद्यमान हैं । सदाचार श्री श्री निवासा चार्य्य जी महाराज के संग्रह किया है सलेमा बाद में लेख विद्य मान है । इन ग्रन्थों के रहते हुये सर्व साधारण को संस्कार ज्ञान होना कठिन है इस लिये मैंने हिन्दी भाषा के सहित वैष्णव संस्कार कौस्तुभ नामक छोटा ग्रन्थ संग्रह किया है आशा है कि सर्व साधारण के उपकार होगा । इति

* लेखक पं० श्री वैष्णवदास शास्त्री *

* श्री *

वैष्णव संस्कार कौस्तुभः।

श्रीगुरून्प्रणिपत्यपूर्वाचार्य्यांश्चदैशिकान्।
वैष्णवानां प्रबोधार्थं संस्कार पञ्च कीर्त्यते ॥
यस्यदेवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशयन्ते महात्मनः ॥

श्वेता० अ०६ श्रु० २२।

भाषा—जो पुरुष जैसे परमेश्वर में जैसी पराभक्ति राखता है तैसे ही गुरू में भक्ति राखना है अर्थात् हरि गुरु में भेद नहीं मानता है। उसी के अर्थ गुरु वेद में कहा हुआ वस्तु के प्रकाश करते हैं। इस श्रुति से गुरु में श्रद्धा होनी चाहिये।

भागवत एकादशस्कन्धश्रीकृष्णवचन।

आचार्य्यं मां विजानीयान्नावमन्येत कर्हिचित्। २ ॥
न मर्त्यबुद्ध्याऽसूयेत सर्वदेवमयो गुरुः ॥

भाषा—आचार्य्य मेरा स्वरूप जाने कभी उनके अपमान नहीं करना और मनुष्य समझ कर कभी शिकायत नहीं करना क्योंकि गुरु सर्व देव स्वरूप हैं ॥ २ ॥

राज धर्म में।

ऋषयश्च हि देवाश्च प्रीयन्ते पितृभिः सह।
पूज्यमानेषु गुरुषु तस्मात्पूज्यतमो गुरुः ॥ ३ ॥

भाषा—ऋषिगण देवगण पितृगणों के सहित तृप्त होते हैं गुरुओं की पूजा करने पर इसलिये गुरु पूज्यतम कहाते हैं ॥ ३ ॥

श्री नारद पञ्चरात्र में।

महाकुलप्रसूतोपि, सर्वयज्ञेषु दीक्षितः।

सहस्रशाखाध्यायी च न गुरुः स्यादवैष्णवः ॥ ४ ॥

भाषा—उत्तम ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न सर्व यज्ञों में दीक्षित। वेदों के हजार शाखावों के पढने वाला होय यदि वह वैष्णव नहीं है तो गुरु नहीं हो सकता है ॥ ३ ॥

अवैष्णवोपदिष्टेन मन्त्रेण निरयं व्रजेत् ।
पुनश्च विधिना सम्यग्वैष्णवाद् ग्राहयेन्मनुम् ॥ ५ ॥

भाषा—अवैष्णवसे विष्णु दीक्षा लेने से शिष्य नरक को जाता है। यदि अवैष्णव से वैष्णव मंत्र लिया होय तो पुनः विधि के सहित वैष्णव से मन्त्रोपदेश लेवे ॥ ५ ॥

पद्म पुराण में ।

सम्प्रदाय विहीना ये मन्त्रास्ते निष्फलामताः ।
परंपरागता ये तु ते कृष्ण करुणान्विताः ॥ ६ ॥

भाषा—भगवत के अनेक मन्त्र हैं, जिस मंत्र के सम्प्रदाय में उपदेश नहीं होता है वह मन्त्र निष्फल है। जिस मंत्रके सम्प्रदाय में गुरु परम्परा से उपदेश होता आता है, वह मन्त्र श्री कृष्ण के कृपा युक्त हैं, अर्थात् उस मन्त्र को गुरु से लेने से फल लाभ होता है ॥ ६ ॥

तन्त्र में ।

अदीक्षिताये कुर्वन्ति जप होमादिकाः क्रियाः ।
न भवन्ति प्रिये तेषां शिलायामुप्तवीजवत् ॥ ७ ॥

भाषा—श्री शिवजी पार्वती जीसे कहते हैं कि, हे प्रिये जो मनुष्य गुरु से मन्त्रोपदेश न लेकर जप पूजा आदि कर्म करता है उसके वे सर्व कर्म निष्फल होते हैं जैसे पाषाण के ऊपर बीज बोने से निष्फल होता है। भाव यह है कि जिस देव के आराधन किया जायगा उस देवके मूल मन्त्र से किया जायगा जो मंत्र गुरु से लाभ होता है वह मूल मंत्र कहा जाता है। किसी पुस्तक आदि में से अभ्यास कर लेने से मंत्र निष्फल है, इस लिये गुरु से मंत्र लेना आवश्यक है।

अदीक्षितस्य वामोरु कृतं सर्वं निरर्थकम्।
पशुयोनिमवाप्नोति दीक्षाहीनो मृतो नरः ॥ ८ ॥

भाषा—हे वामोरु जो गुरु से दीक्षा नहीं लीया उसके सर्व शुभ कर्म किया निष्फल हैं। दीक्षा हीन पुरुष मरने बाद बैल भैंसा आदि बनता है ॥ ८ ॥

इति दीक्षा निर्णय।

भाषा—श्री विष्णु के आराधन के अङ्ग पञ्च संस्कार होते हैं वे संस्कार गुरु से मिलते हैं पञ्च संस्कार के बिना विष्णु के आराधन नहीं होता है।

पञ्चरात्र में और पद्म पुराण में।

तापः पुंड्रं तथा नाम मन्त्रो याज्ञश्च पञ्चमः।
अमी हि पञ्चसंस्काराः परमैकान्तहेतवः ॥ ९ ॥

भाषा—शंख चक्र धारण, ऊर्ध्व पुंड्र तिलक, शिष्य के भगवत सम्बन्धी नाम धरना, रामदास कृष्णदास विष्णुदास इत्यादि गृहस्थ विरक्त सबं के लिये है ३ मन्त्रोपदेश ४ तुलसी धारण विष्णु के ध्यान पूजनोपदेश ५ एही पाञ्च संस्कार मोक्ष के कारण हैं। पहले तिलक ऊर्ध्व पुंड्र शंख चक्र धारण तुलसी धारण मन्त्रोपदेश भगवत सम्बन्धी नाम करण विष्णु के ध्यान पूजनोपदेश यह क्रम है ॥ ८ ॥

अथ ऊर्ध्व पुंड्र तिलक संस्कारः।

पद्म पुराण उत्तर खंड।

ऊर्ध्व पुंड्रधरो विप्रः सर्वलोकेषु पूजितः।
विमानवरमारुह्य याति विष्णोः परं पदम् ॥ १० ॥

भाषा—ऊर्ध्व पुंड्र तिलक करने वाला ब्राह्मण सर्व लोकों में पूजित है, शरीर त्यागने बाद उत्तम विमान पर चढ़ कर विष्णु के स्थान को जाता है ॥ १० ॥

ऊर्ध्व पुंड्रधरं विप्रं यः श्राद्धे भोजयिष्यति।

आकल्पकोटिपितरः तस्य तृप्ता न संशयः ॥ ११ ॥

भाषा—ऊर्ध्व पुंड्र तिलक किये हुये ब्राह्मण को जो श्राद्ध में भोजन कराता है उसके पितृ गण कोटि कल्प तक तृप्त रहते हैं यह बात निश्चित है ॥ ११ ॥

ऊर्ध्वपुंड्रधरो यस्तु कुर्याच्छ्राद्धं शुभानने ।
कोटि कल्प सहस्राणि वैकुण्ठे वासमाप्नुयात् ॥ १२ ॥

भाषा—श्री शिवजी कहते हैं, हे शुभानने पार्वति ऊर्ध्व पुंड्र तिलक धारण कर जो श्राद्ध करता है वह हजार कोटि कल्प तक वैकुण्ठ में निवास करता है ॥ १२ ॥

ब्रह्म पुराण में ।

अशुचिर्वाप्यनाचारो मनसा पापमाचरन् ।
शुचिरेव भवेन्नित्यमूर्ध्वपुंड्राङ्कितो नरः ॥ १३ ॥

भाषा—अपवित्र होय अथवा आचार से रहित हो मन से पाप करने वाला होय ऊर्ध्व पुंड्र तिलक धारण करने से निरन्तर पवित्र होता है ॥ १३ ॥

ऊर्ध्व पुंड्रधरो मर्त्योम्रियते यत्र कुत्रचित् ।
श्वपाकोपि विमानस्थो मम लोकेमहीयते ॥ १४ ॥

भाषा—श्रीकृष्ण जी कहते हैं कि ऊर्ध्व पुंड्र तिलक धारण करने वाला शरीर त्याग किसी जगह करे मेरे धाम को पहुँचता है। ऊर्ध्व पुंड्र धारण करने वाला जाति के डोमड़ा भी विमान पर चढ़ कर मेरे धाम को जाता है ॥ १४ ॥

इति ऊर्ध्व पुंड्र महात्म्यम् ।

अथोर्ध्वपुंड्र स्वरूपम् ।

भगवान् सनत्कुमारजी के प्रति कहते हैं ।

नासिकामूलमारभ्य ललाटान्तसमान्वितम् ।
साधिकांगुलान्तरालमधिकं तूत्तरोत्तरम् ॥ १५ ॥

रेखाद्वयविनिर्मितं सञ्ज्ञं हरिमन्दिरम् ।
व्रीहिमात्रं पृथुं पार्श्वे चतुरंगुललम्बकम् ॥ १६ ॥

भाषा—त्रिभागो मूल मुच्यते । नाशिका के दो भाग छोड़कर ऊपर मूल कहाता है । नाशिका के दो भाग छोड़कर तिसरा भाग से लेकर ललाट के शपर्यन्त एक अंगुल से कम बीचमें छेटा न होय वल्कि दो अङ्गुल बीच में छेटा होय ॥ १५ ॥

भाषा—इस तरह दो रेखा बनावे सुन्दर, चावल धान प्रमाण पतला होय नीचे पार्श्व वगल कुच्छ मोटा होय ६ अङ्गुल लम्बा होय इसके नाम हरि मन्दिर है ॥ १६ ॥

पद्म पुराण में ।

एकान्तिनो महाभागाः सर्वभूतहिते रताः ।
सान्तरालं प्रकुर्वन्ति पुंड्रं हरिपदाकृतिम् ॥ १७ ॥

भाषा—मोक्षार्थी महा भाग्यवान् सर्व जीवों के कल्याण करने वाले मध्य छिद्र के सहित ऊर्ध्व पुंड्र करते हैं वह ऊर्ध्व पुंड्र हरिपदाकृति कहाता है ॥ १७ ॥

हरेः पादाकृतिधार्यमूर्ध्वपुंड्रं विधानतः ।
मध्यच्छिद्रेणसंयुक्तं तद्धिवै हरिमन्दिरम् ॥ १८ ॥

भाषा—हरि के पादाकृति ऊर्ध्व पुंड्र तिलक विधि से धारण करना चाहिये, सो विधि आगे कहेंगे । मध्य छिद्र के सहित ऊर्ध्व पुंड्र हरि मन्दिर है । इससे एक ऊर्ध्व पुंड्र तिलक हरि मन्दिर और हरि पादाकृति कहाता है ॥ १८ ॥

हरेः पादाकृतिमात्मनो हिताय मध्यच्छिद्रमूर्ध्वपुंड्रं यो धारयति स परस्य प्रियो भवति स पुण्यवान्भवति स मुक्तिभाग्यवति । इति ॥ १८ ॥

यजुर्वेद के हिरण्य केशि शाखा में और अथर्वण वेद के यागवल्क्योपनिषद्में । अपने आत्माके हितकेलिये मध्य छिद्र वाला हरिपादाकृति ऊर्ध्व पुंड्र तिलक को जो धारण करता है वह परब्रह्म को प्रिय पुण्य मुक्ति का भागी होता है ॥ १८ ॥

ब्रह्म पुराण में ।

निरंतरालं यः कुर्यादुर्ध्वपुंड्रं द्विजाधमः ।
सहि तत्र स्थितं विष्णुं लक्ष्मीं चैव व्यपोहति ॥ १८ ॥

भाषा—जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य दोनों रेखा सटाकर बीच में छेटा न देकर ऊर्ध्व पुंड्र तिलक करता है वह अधम है । क्यों अधम है, वह दोनों रेखा के मध्य में रहने वाले विष्णु लक्ष्मी को त्यागता है। क्यों कि मध्य में छिद्र न रहने से विन्दु कैसे रहेगा—विन्दु स्वरूप ही तो लक्ष्मी विष्णु हैं। विन्दु लक्ष्मी विष्णु स्वरूप हैं सो आगे कहते हैं।१८।

पद्म पुराण में ।

ऊर्ध्व पुंड्रं मृदा कुर्यान्मध्ये शून्यं प्रकल्पयेत् । ❀

भाषा—ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक मृत्तिका से करैं मध्य में एक विन्दु धरे । ज्योतिष् में शून्य विन्दु कहाता है । *

कूर्म पुराण में ।

कृष्णाकारं समं मध्ये धारयेद्धरिमन्दिरे ॥ १९ ॥

भाषा—नेत्र के मध्य रहने वाला काला गोलक के तुल्य स्याम-विन्दुको हरि मन्दिर रूप ऊर्ध्व पुंड्रके मध्य धारण करैं । कैसा वह विन्दु है । समं, मया रमया सह वर्त इति समः तं सम, लक्ष्मी विष्णु स्वरूप है।

उसी जगह श्री नारदजी के वाक्य ।

भ्रुवोर्मुक्ताकारसमं धारयेद्धरिमन्दिरे ॥

भाषा—ऊर्ध्व पुंड्ररूप हरि मन्दिर में भ्रुवों के मध्य । मुक्ताकार समं, मया रमया सह वर्तत इति समः, मुक्ताकारश्चासौ समः मुक्ताकार समः तं मुक्ताकार समं, छोटि मोतिके तुल्य लक्ष्मी के सहित विष्णु को धारण करैं ॥ इस वचन से भी भ्रुवों के मध्य स्याम विन्दु लक्ष्मी विन्दु स्वरूप है । *

पद्म पुराण में ।

ऊर्ध्वपुंड्रस्य मध्ये तु विशालेषु मनोहरे ।
सान्तराले समासीनो हरिस्तत्र श्रिया सह ॥ २१ ॥

भाषा—अन्तरालचछेटा वाला विशाल सुंदर ऊर्ध्वपुंड्र के मध्य समासीनः, मयालक्ष्म्या सह वर्तेत इति समः, सम आसीनः समासीनः, हरिः । लक्ष्मी के सहित हरि स्थित हैं । और श्रिया सह हरिरासीनः, श्रीके सहित हरि स्थित हैं । यहां लक्ष्मी और श्री के सहित हरि ऊर्ध्वपुंड्र के मध्य विराजमान होते हैं, सो श्री शब्द से श्री राधिकाजी के ग्रहण हैं (श्रीश्चलक्ष्मीश्च ते पत्न्या पुरुषसूक्त । हे विष्णो आपके श्री और लक्ष्मी दोनों पत्नी हैं । इस श्रुति में लक्ष्मी से अन्य श्री हैं । श्री शब्द के अर्थ श्री राधिकाजी हैं । लक्ष्मी ऐश्वर्य के अधिष्ठाता है श्री शब्द के अर्थ राधिका प्रेम के अधिष्ठाता हैं लक्ष्मी में प्रेम करने से ऐश्वर्य प्राप्त होता है राधिका में प्रेम होने से हरि में प्रीति होती है । ऐश्वर्य और प्रेम के मालिक हरि हैं वे दोनों खजानची हैं प्रेम को चाहना करने वाले राधा-कृष्ण कहते हैं, लक्ष्मी कृष्ण नहीं कहते हैं । एक स्याम विन्दु लक्ष्मी राधाहरि तीनों स्वरूप सिद्ध है । शंका—एक स्याम विन्दु लक्ष्मी स्वरूप कहै अथवा राधा स्वरूप कहैं अथवा हरि स्वरूप कहैं एक बिन्दु तीनों स्वरूप कैसे होसकता है । उत्तर जैसे एक शालिग्राम पाषाणविग्रह राधा-कृष्ण सीताराम लक्ष्मी नारायण कहाते हैं तैसे एक स्याम विन्दु लक्ष्मी राधाहरि स्वरूप है । इस विंदु के नाम स्याम श्री है, स्याम के सहित राधिका स्याम श्री हैं अथवा स्याम स्वरूप होने से स्याम श्री है । विस्तार के भय से इस कथा को संक्षेप से लिखा ॥ २१ ॥

नारद पञ्च रात्र में ।

कज्जलस्य गिरेश्चैव राधाकुण्डविशेषतः ।

भाषा—जगन्नाथ पुरी के पास कज्जल गिरि है, व्रज में गिरिराज पर्वत के तरीटी में राधाकुंड है । राधाकुंड के मृतिका से स्याम श्री करै, अर्थात् स्याम विन्दु मस्तक में धरे । राधाकुंड के मृत्तिका न लाभ होने से कज्जल गिरिपाषाण से धरै । कज्जलगिरि पाषाण न लाभ होने से सोपारी जलाकर भगवान के प्रसादी किणिका मात्र चंदन तुलसी जली सुपारी में छोड़कर थोड़ी मिश्री देकर खूब घोटकर डिब्बा में रखलेवे रोज करै ॥

* इति तिलक स्वरूप निर्णयः *

अथ तिलक विधि ।

पद्म पुराण उतरख खण्ड में ।

ललाटेके शवं ध्यायन्नारायणमथोदरे ।

वक्षः स्थले माधवं च गोविन्दं कण्ठकूपके ॥ २२ ॥
विष्णुं च दक्षिणे कुक्षौ बाहौ च मधुसूदनम् ।
त्रिविक्रमं कन्धरे च वामनं वामपार्श्वके ॥ २३ ॥

पृष्ठे तु पद्मनाभं च कट्यां दामोदरं न्यसेत् ।
तत्प्रक्षालनतोयेन वासुदेवं तु मूर्द्धनि ॥ २४ ॥

भाषा – ललाट में, केशवायनः । उदर में, नारायणायनमः । वक्षः स्थल में, माधवायनमः । कंठ में, गोविन्दायनमः । दक्षिण कुक्षि में, विष्णवेनमः । बाहों में, मधुसूदनायनमः । कंधों में, त्रिविक्रमायनमः । वामपार्श्व में, वामनायनमः । पीठ में, पद्मनाभायनमः । बाद हाथ धोकर उस जलको लेकर मस्तक में वासुदेवायनमः । इन भगवान् के नामों से द्वादश तिल करना चाहिये ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

स्कन्द पुराण में ।

ब्रह्मन् द्वादशपुण्ड्राणि ब्राह्मणः सततं धरेत् ।
चत्वारि भूभृतां पुत्र पुण्ड्राणि द्वे विशां स्मृतम् ॥२५॥
एकं पुण्ड्रं च नारीणां शूद्राणां च विधीयते । ❀

भाषा--ब्राह्मण उक्त द्वादश तिलक करैं । क्षत्रिय ललाट कंठ में स्कन्धों में चार जगह तिलक करैं । वैश्य ललाट कंठ में दो जगह तिलक करैं । शूद्र और स्त्री ललाट में एक तिलक करैं ॥ २५ ॥ *

पद्म पुराण में ।

यज्ञोदानं तपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम् ॥ २७ ॥
व्यर्थं भवति तत्सर्वमूर्ध्वपुंड्रंविना कृतम् ।
तत्सर्वं राक्षसं सत्यंनरकं घोरमाप्नुयात् ॥ २८ ॥

भाषा—बिना ऊर्ध्वपुंड्र तिलक किये यज्ञ दान तप होम बेद पढ़ना पितृयों के तर्पण वे सर्व शुभकर्म निष्फल होते हैं । ऊर्ध्वपुंड्र के बिना वे सर्व कर्म के फल राजा बलि को मिलता है, इस लिये राक्षस कहाता है । कर्म के फल न मिलने से घोर नरक में जाता है ॥ २८ ॥

पद्म पुराण में कृष्ण वचन।

मत्पूजा होमकाले च सायं प्रातः समाहितः।
मद्भक्तो धारयन्नित्यमूर्ध्वपुण्ड्रं भयावहम् ॥ २६ ॥

भाषा—मेरी पूजा होम काल में सवेर सायंकाल में भय दूर करने वाला ऊर्ध्वपुंड्र तिलक को प्रतिदिन मेरे भक्त धारण करैं ॥ २६ ॥

तिलक करने के लिये अंगुलि के फल।

स्मृति।

अनामिका कामदा प्रोक्ता मध्यमायुः करीभवेत्।
अगुष्ठः पुष्टिदः प्रोक्तस्तर्जनी मोक्षदायिनी ॥ ३० ॥

भाषा—सब से छोटी अंगुलि के पास रहने वाली अंगुलि अनामिका कहाती है। मध्य की बड़ी अंगुलि मध्यमा कहाती है अंगुष्ठे के पास रहने वाली अंगुली तर्जनी कहाती है, अनामिका से तिलक करने से मनोरथ पूर्ण होता है। मध्यमा से तिलक करने से आयु की वृद्धि होती है। अंगुष्टा से तिलक करने से शरीर की पुष्टी होती है। तर्जनी से तिलक करने से मोक्ष होता है। जो आचमनी से और लकड़ी से तिलक करते हैं, वे तिलक नहीं करते है नरक जाने का काम करते हैं ॥ ३० ॥

अथ तिलकार्थं द्रव्य निर्णयः।

ब्रह्म पुराण में।

शालग्रामशिलालग्नं चन्दनं धारयेत्सदा-
सर्वांगेषु महाशुद्धि शिद्धये कमलासन ॥ ३१ ॥

भाषा—भगवान् कहते है ब्रह्मा से हे कमलासन शालग्रामपाषाण विग्रह के उतारा हुआ चन्दन को महा पवित्रता के लिये अपने सर्व शरीरों में धारण करना चाहिये, इस चंदन के धारण करने से लाख दफे गंगा स्नान के फल तुल्य नहीं होसकता है ॥ ३१ ॥

भविष्योत्तर पुराण में ।

यस्याङ्गं धूपशेषेण मार्जितं प्रत्यहं हरेः ।
ललाटं धूपपुण्ड्रं वा यमस्यापि यमो हि सः ॥ ३२ ॥

धारको धूप शेषस्य यत्र तिष्ठति मत्प्रियः ।
तत्प्रयागसमं विद्धि त्रिवेण्या सदृशो हि सः ॥ ३३ ॥

धारिणं धूप शेषस्य यो निन्दति नराधमः ।
स यमस्य वशेगन्ता मद्द्रोही भाविता नरः ॥ ३४ ॥

भाषा—हरि के धूप करने बाद जो राख है उसको अपने अङ्ग में लगाता है, अथवा प्रति दिन उस राख से ऊर्ध्वपुंड्र तिलक करता है वह पुरुष यमराज के भी यमराज हैं, यमराज उससे भय खाते हैं ॥ ३२ ॥ उस धूप राख को धारण करने वाला भगवान् को प्रिय है, भगवान् स्वयं कहते हैं वह जिस जगह रहता है वह जगह प्रयाग के तुल्य जाने, और वह भक्त त्रिवेणी तुल्य है । प्रयाग में गंगा, यमुना, सरस्वती के संगम त्रिवेणी है । तैसे उस भक्त के रहने की भूमि प्रयाग हैं, वह स्वयं त्रिवेणी रूप है उसके दर्शन से ही कल्याण है ॥ ३३ ॥ उस धूप को धारण करने वाले की जो निन्दा करता है, वह नराधम है, यमराज के गृह वास करेगा मेरा द्रोही है ॥ ३४ ॥

गरुड़ पुराण में ।

तुलसी मृत्तिका पुण्ड्रं यः करोतिदिनेदिने ।
तस्यावलोकनात्पापं जाति वर्षकृतं नृणाम् ॥ ३५ ॥

भाषा—तुलसी के नीचे की मृत्तिका से तिलक जो रोज करता है, उसके दर्शन से मनुष्यों का वर्ष मात्र के किया पाप दूर होता है ॥३५॥

पद्म पुराण में ।

पर्वतादौ नदीतीरे विल्वमूले जलाशये ।
सिन्धुतीरे च वल्मीके हरि क्षेत्रे विशेषतः ॥ ३६ ॥
विष्णोःपादोदकं यत्र प्रवाहयति नित्यशः ।
पुण्ड्राणां धारणार्थाय गृह्णीयात्तत्र मृत्तिकाम् ॥ ३७ ॥

श्रीरंगे वेंकटाद्रौ च श्रीकूर्मेद्वारिकेशुभे ।
प्रयागे नारसिंहाद्रौ वाराह तुलसीवने ॥ ३८ ॥
धृत्वा पुंड्राणि चाङ्गेषु विष्णुसायुज्यमाप्नुयात् ॥ ३९ ॥

भाषा—पर्वत नदी तीर विल्व वृक्ष के जड़ जलाशय समुद्र तीर बम्त्री व्यमउट हरिके क्षेत्र जिस प्रनाली से निरन्तर विष्णु के मन्दिर के जल बहता है उस प्रनाली के, इन जगहों से ऊर्ध्व पुंड्र धारण करने के लिये मृत्तिका ले आनी चाहिये, और श्रीरंग वेंकट गिरि कूर्म क्षेत्र द्वारिका प्रयाग नारसिंह गिरि वाराह क्षेत्र वृन्दाबन अथवा तुलसी वृक्षों के जंगल । इन सर्व जगहों से मृत्तिका लाकर श्रद्धा से विष्णु के चरणोदक जल से पाशा बना कर रख लेवे । प्रतिदिन उससे अपने शरीर में ऊर्ध्व पुंड्र तिलक करैं, इस तरह करने से विष्णु के सायुज्य मोक्ष को प्राप्त होता है ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

इन सर्व मृत्तिकावोंसे अधिक महत्व गोपी चंदन के है।

पद्म पुराण में ।

ब्रह्मघ्नो वाथ गोघ्नो वा हेतुकः सर्वपापकृत् ।
गोपीचन्दनसम्पर्कात्पूतो भवति तत्क्षणात् ॥ ४० ॥
गोपीचन्दनलिप्तांगो दृष्टश्चेत्तादघंकुतः ।
गोपीमृत्तुलसी शंखः शालग्रामः सचक्रकः ॥ ४१ ॥
गृहेपि यस्य पञ्चैने तस्य पाप भयं कुतः । ❀

भाषा—ब्राह्मण को मारने वाला गौ को मारने वाला सर्व पापको करने वाला मनुष्य अपने शरीर में गोपीचंदन लगाता है तो उसी काल सर्व पापों से छुट जाता है ॥ ४० ॥ गोपी चन्दन तुलसी शंख चक्र शालग्राम भगवान् ये पाञ्च जिसके गृह में रहते हैं वह पाप से निवृत्त होजाता है ॥ ४१ ॥ *

गरुड पुराण में श्रीनारदजी के वचन ।

यो मृत्तिकां द्वारवती समुद्भवां करेसमादाय ललाटके वुधः । करोति नित्यं त्वथचोर्ध्वपुंड्रकं क्रियाफलं कोटिगुणं तदा भवेत् ॥ ४२ ॥

क्रियाविहीनं यदि मन्त्रहीनं श्रद्धाविहीनं यदि कालवर्जितम् । कृत्वा ललाटे यदि गोपी चन्दनं प्राप्नोति तत्कर्मफलं सदाक्षयम् ॥ ४३ ॥

भाषा—जो मनुष्य द्वारिका में उत्पन्न गोपीचन्दन मृत्तिका को हाथ में लेकर ललाट में प्रति दिन ऊर्ध्व पुंड्र तिलक कर शुभ कर्म को करता है, उसके इस कर्म के फल कोटि गुणा अधिक होता है ॥ ४२ ॥

भाषा—क्रिया से हीन होय मन्त्र से हीन होय श्रद्धा से हीन होय समय पर कर्म करने वाला न होय यदि ललाट में गोपी चन्दन लगाकर शुभ कर्म करता है तो उस कर्म के अक्षय फल को पाता है॥४३॥

काशी खंड में यमराज वचन ।

दूता शृणुत यद्भालं गोपीचन्दनलाञ्छितम् ।
ज्वलदिन्धनवत्सोपि दूरत्याज्यः प्रयत्नतः ॥ ४४ ॥

भाषा—यमराज अपने दूतों से कहते हैं कि हे दूतों तुम लोग सुनो ! जिसके मस्तक में गोपीचन्दन लगा है, वह आग में जली हुई लकड़ी के तुल्य है, उसको दूर से त्याग देना, पास जावोगे तो जल जावोगे ॥ ४४ ॥

गोपीचन्दनोपानिषद् में ।

गोपीचन्दनपंकेन ललाटंयस्तु लेपयेत् ।
एकदंडी त्रिदंडी वा स वै मोक्षं समश्नुते ॥ ४५ ॥

भाषा-गोपीचन्द पंक से ललाट में जो लेप करता है, वह मोक्ष को प्राप्त होता है, एक दंडी अथवा त्रिदंडी सन्यासी होय ॥ ४५ ॥

वासुदेव उपनिषद् में ।

तदुहोवाच भगवान् वासुदेवो वैकुठस्थानोद्भवं मम-प्रीतिकरं ममभक्तैर्ब्रह्मादिभि र्धारितं विष्णुचन्दनं ममांगे प्रतिदिनमालिप्तं गोपीभिः प्रक्षालनाद् गोपीचन्दन-

माख्यातं मदङ्गलेपनं पुण्यं चक्रतीर्थादिसंस्थितं शंखचक्रस-मायुक्तं पीतवर्णं मुक्तिसाधनं भवति ॥ ४६ ॥

भाषा—भगवान् वासुदेव बोले, वैकुण्ठ स्थान से उत्पन्न मेरे में प्रीति को बढ़ाने वाला मेरे भक्त ब्रह्मादि देवों ने मेरे शरीर में धारण किया विष्णु, चन्दन मेरे अङ्ग में प्रतिदिन लेप था, गोपीयों ने मेरे अङ्ग से उस चन्दन को धोया है, इसलिये गोपीचंदन कहाता है, मेरे अंग के लेपन पवित्र पाप नाश करने वाला चक्रतीर्थादि में रहता है शंखचक्रों से चिह्नित है, पीत वर्ण मुक्ति के दाता है। इस चन्दन के नाम विष्णु चंदन और गोपीचंदन हैं, वेतद्वारिका से तीन कोस गोपी तलाव के नाम चक्रतीर्थ हैं, उसी जगह वर्तमान है। इस चंदन को खोदने से उस में शंखचक्र के चिह्न दृश्य होता है ॥ ४४ ॥

ब्राह्मणानां तु सर्वेषा वैदिकानामनुत्तमम्।
गोपीचन्दनवारिस्थमूर्ध्वपुण्ड्रं विधीयते ॥ ४७ ॥

भाषा—भगवान् वासुदेव कहते हैं कि वैदिक सर्व ब्राह्मणों को सर्व चंदनों से उत्तम गोपीचंदन से जल मिला कर ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक करने का विधान है ॥ ४७ ॥

बाष्कल संहिता में।

गोपीचन्दनको नमस्कार प्रार्थनामन्त्र

गोपीचन्दन पापघ्न विष्णुदेहसमुद्भव।
चक्राङ्कित नमस्तुभ्य धारनान्मुक्तिदो भव ॥ ४८ ॥

भाषा—पाप के नाश करने वाले विष्णु देह से उत्पन्न चक्र से चिह्नित गोपीचन्दन आपको दण्डवत्प्रणाम करता हूं, मस्तक में धारण करने से मुक्ति दाता होवे। इस तरह प्रार्थना कर गोपीचन्दन से तिलक करना चाहिये ॥ ४८ ॥

इति श्रीनैष्ठिकब्रह्मचारिणा श्रीनिम्बार्कपादपद्माश्रितेन श्रीवैष्णवदास शास्त्रिणा हिन्दिभाषया प्रथमऊर्ध्वपुण्ड्रतिलकसंस्कारः संगृहीतः ॥ १ ॥

कितने मूर्ख अशिक्षित वा विद्वान् आक्षेप करते हैं कि शङ्ख चक्र धारण का वेद में कहां लेख है और शङ्ख चक्र धारण करने से पतित होता है। इन सर्व के अज्ञान दूर होने के लिये पहिले शङ्ख चक्र धारण में वेद प्रमाण दिखा कर पौराण प्रमाण दिखाया जायगा।

धृतोर्ध्वपुण्ड्रः कृतचक्रधारी विष्णुं परं ध्यायति यो महात्मा स्वरेण मन्त्रेण सदाहृदिस्थितं परात्परं यन्महतो-महान्तम्। यजुर्वेद, कठशाखा, ३ प्रश्न, ३ अनुवाकः।

भाषा—जो भगवतभक्त मस्तक में ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक धारण कर बाहों में शंख चक्र धारण कर।

परंचिदचिद्भ्यां स्वरूपेण धर्मेणोत्कृष्टं पुनःकथंभूतं परात्परं, चेतनाख्या तथा परा इति चेतनरूपाचिच्छक्ते-रुत्कृष्टशक्तिमन्तं पुनः महतोमहान्तं, अचिच्छक्तिश्चिच्छ-क्त्यापेक्षया स्थूलस्वरूपतया महच्छब्देन वा व्यवह्रियते ततो महान्तंस्वरूपधर्माभ्यामुत्कृष्टंपुनर्हृदिस्थितं हृत्पुण्डरीके श्रीभूलीलादेवीभिःसहास्थितं विष्णुं कृष्णस्वरूपं, सर्वस्य चाहं हृदिसन्निविष्ट इति, ध्यायति, मानसपूजां वा ध्यानं करोति। स्वरेण वेदभारतपञ्चरात्रमूलरामायणादीनवलं-ब्य पाठस्तुत्यादिकं करोतीत्यर्थः मन्त्रेण गुरूपदिष्टमन्त्रेण उपांशुमानसं वा जपति स महात्मा प्रकृतिसम्बन्धशून्य-मोक्षीभवतीत्यर्थः।

भाषा—पर शब्दचित् नाम जीव अचित् नाम प्राकृत वे दोनों भगवान् की शक्तियां हैं वे दोनों से उत्तम परात्पर अचित् शक्ति से पर चित् शक्ति हैं। विष्णु पुराण में कहा है कि चेतन शक्ति पर है। चेतन शक्ति से प्रबल शक्ति वाला महतोमहान्तं अचित् शक्ति चित् शक्ति के अपेक्षा से स्थूल होने से महत् है उस महत से महत नाम व्यापक स्वरूप और धर्म से। हृदिस्थितं हृदय में स्थित कमल के मध्य विराजमान श्री भूलीलादेवीयों के सहित। विष्णुं कृष्ण के, गीता में कृष्णजी ने कहा

है, सर्व के हृदय में मैं रहता हूं। स्वरेण, वेद भारत पञ्चरात्र वाल्मीकीय रामायणादिकों को लेकर स्वरूप धर्म चरितादिकों की कीर्तनादि करता है। मन्त्रेण, गुरु से लाभ मन्त्र को उपांशु वा मानस जप करता है। षष्ठ्यर्थ में तृतीया है। स महात्मा प्रकृति सम्बन्ध निवृत्ति पूर्वक भगवद्भावापत्तिरूपमोक्षको लाभ करता है। विष्णु शब्द के अर्थ व्यापक हैं। तीन तरह से भगवान् उपास्य हैं अन्तर्यामी, सत्चित् आनन्द विग्रह, सर्वात्म स्वरूप। यहां हृदय में स्थित कमल के मध्य सत् चित् आनन्द अंगुष्ठ मात्र स्वरूप की उपासना श्रुति कहती है, विस्तार भय से स्वल्प कहा है॥ १॥

सामवेद के मैत्रायणीय शाखा में।

पवित्रंवैअग्निराग्निर्वै सहस्रारः सहस्रारोनेमिर्नेमिनातप्ततनुर्ब्राह्मणः सायुज्यं सालोकतामाप्नोति। साममैत्रायणी ३ शाखाः ३ खण्ड० ॥

भाषा—पवित्रं पवित्र है, इसलिये अग्नि है। लोक में अग्नि पवित्र करती है आगे श्रुति स्पष्ट करती है। अग्निर्वै सहस्रारः, अग्नि सुदर्शन है। सहस्रारनेमिः सहस्रं अराणि नेमौ यस्यसः सहस्रारनेमिः। और कैसा सुदर्शन है हजार अरजिस के नेमि में हैं। नेमिनातप्ततनुब्राह्मणः, नेमि से तप्त शरीर ब्राह्मण, सायुज्यं सालोकतामाप्नोति। सायुज्य सालोक्य मोक्ष को प्राप्त होता है॥ २॥

अथर्वण रहस्य कौशकेयी शाखा में।

चक्रंविभर्त्तिवपुषाभितप्तं बलंदेवानाममितस्यविष्णोः। सएतिनाकं दुरिता विधूय प्रयान्तियत्रयतयोवीतरागाः॥

अर्थवण रहस्य के ५ ब्राह्मण-अध्या ८।

भाषा—देवानां एक वचन स्थाने बहुवचनं देवस्येत्यर्थः। देवस्यामि तस्यविष्णोः, देव अपरिमित व्यापक स्वरूप विष्णु के बलं आयुधं, अभितप्तं संस्कारेण वह्नौतापितं चक्रं चक्रराजं सुदर्शनं वपुषाविभर्ति, शरीर से धारण करता है। सः धारकः धारण करने वाला। दुरिता इति दुरितान् विधूय शुभाशुभ कर्मों को त्याग कर नाकं एति, मोक्ष को प्राप्त होता है। नाक शब्दार्थ श्रुति कहती है। यत् यत्र जिस जगह, वीतरा-

गायतयो विशन्ति । इस लोक पर लोक भोगवासेनारहित यतयः इन्द्रियों को दमन करने वाले सर्व कर्म त्याग कर विशन्ति यान्ति दोनों पाठ हैं; प्राप्त होते हैं । एह श्रुति ऋग्वेद के वाष्कल संहितामें भी है॥३॥

अथर्वण रहस्य कौशकेयी शाखा में ।

एभिरुरु क्रमस्याचिह्नै रङ्किता लोके सुभगा भवामः ।
तद्विष्णोः परमंपदंये गच्छन्तिलाञ्छिताः ॥

भाषा—उरु क्रमस्य विष्णोः, उरु क्रम नाम विष्णु के एभिर्चिन्हैः, शंखचक्र चिन्हैः, शखचक्र के चिह्नों से अङ्किताभुजयोरित्यर्थः भुजों में अङ्कित लोके सुभगाभवामः, वयमित्यर्थः । संसार में हम लोग पुण्य के भागी हों यगे । येलाञ्छिता शंखचक्र धारिणः शंखचक्र धारण करने वाले गच्छन्ति यत्रतिशेषः जाते हैं जहां, तद्विष्णोः परमंपदं, वही विष्णु के परमपद स्थान हैं ॥ ४ ॥

शुक्ल यजुर्वेद में वाजसनेयी उक्त शतपथ ब्राह्मण में ।

कात्यायिनी प्रपपच्छयाज्ञवल्क्येतिहोवाच देवासः पितरायेनविधृतेन वाहुना सुदर्शनेन प्रयाताः स्वर्गलोकमायान्ति येनाङ्किनोमन वोलोक सृष्टिं वितन्वान्ति ब्राह्मणास्तद्वहन्ति । अग्निनाचै होतातप्तं चक्रं द्विभुजेधार्य्यमित्यूर्ध्व पुण्ड्रमालिखेत्तस्माद् द्विरेखा भवाति पुनरागमनं नयाति ब्राह्मणः सायुज्यं सालोकतां जयातियएवंवेद ।

अनुवाक ३ ॥

भाष-कात्यायनी याज्ञवल्क्य से पूछती भई । याज्ञवलक्य इतिहोवाच याज्ञवल्क्य कहते भये, देव पितृगण जिस सुदर्शन के वाहु में धारण करने से स्वर्ग में निवास करते हैं, जिस सुदर्शन के धारण वाहों में करने से मनुलोकों की पालना करते हैं, ब्राह्मण अपने वाहों में धारण करते हैं । अग्नि से तप्त सुदर्शन को होता धारण करैं, बाद मस्तकादिकों में ऊर्ध्व पुण्ड्र धारण करने से ऊर्ध्व पुण्ड्र में खड़ी दो रेखा होते हैं, इस तरह चक्रादि ऊर्ध्व पुण्ड्र धारण करने से फिर संसार में जन्म नहीं होता है, ब्राह्मण सायुज्य सालोक्य मोक्ष को प्राप्त होता है । जो इस तरह जानता है, सो भी मोक्ष को प्राप्त होता है ॥ ५ ॥

यजुर्वेद के कठशाखा में।

चरणं पवित्रं वितत पुराणं येन पूतस्तरति दुष्कृतानि। येन पवित्रेण शुद्धेन पूता अतिपाप्मानमरातिं तरेम।
प्रश्न ३ अनुवाक ३॥

सुदर्शनस्य, चरणं चिह्नं पवित्र पापनाशनं विततं सर्व लोकेषु प्रसिद्धं व्याप्तं वा, पुराणं ब्रह्मादिदेवैर्धारितं अतएव पुराणं, येन सुदर्शनेन, धारणेन पूतः पवित्री भूतः, जनः। दुष्कृतानि पापानि तरति। तेन सुदर्शनेन पवित्रेण पापनिवर्तकेन शुद्धेन अग्निनातप्तेन पूता वाहौ धारणेन पवित्री भूता वयमितिशेषः। अति पाप्मानं दुःखहेतुं आरतिं संसारं तरेम।

सुदर्शन के चिह्न पाप नाशक सर्व लोकों में प्रसिद्ध व्याप्त ब्रह्मादि देव धारण किये हैं, इसलिये पुराण है। जिस सुदर्शन के धारण से पवित्र जन पापों से निवृत्त होता है। पाप नाश करने वाले अग्नि से तप्त सुदर्शन धारण से पवित्र हम लोग दुःख के कारण संसार को तर जावेंगे।

आथर्वणिक सुदर्शनोपनिषद्‌ विष्णु सूक्त में।

निचिक्षेप सुषणं विद्यमानं मध्ये वाहुमद धत्सुदर्शनं, विष्णोरिदं भूरि तेजः प्रधर्षति दिवानक्तं विभृयुस्तज्जनासः॥ निचिक्षेप सुषणं प्रहारेण शत्रूणां विधर्षणं विद्यमानंवेद शास्त्रादिषु प्रसिद्धं भूरि तेजः कोटि सूर्य परिमित तेजः। दिवानक्तं दिवासूर्यस्य रात्रौ चन्द्रा दीनां तेजः प्रधर्षति स्वतेजसा तिरस्करोति। एवं भूतं विष्णोरिदं सुदर्शनं मध्ये वाहु मध्ये अदधत्। देवाधृतवन्तः। जनासः जना लोके वाहु मध्ये विभृयुः। धारणं कुर्वन्तु।

भाषा—प्रहार करने से शत्रुओं के विजय करने वाला वेद शास्त्रों में प्रसिद्ध कोटि सूर्य के तुल्य तेज वाला दिन में सूर्य के, रात्रि में चन्द्रा-

दिकों के तेज को अपने तेज से तिरस्कार करने वाला-इस तरह विष्णु के ऐसे सुदर्शनको वाहु के मध्य देवता धारण करते भये। मनुष्य लोक में वाहु मध्य धारण करें ॥ ७॥

अथवर्ण महोपानिषद् ब्रह्म सूक्त में।

दक्षिणेतु भुजे विप्रो बिभृयाद्वै सुदर्शनं सव्यशंखं-विभृया च इति वेदविदो विदुः। मन्त्र ८॥

भाषा—ब्राह्मण दक्षिण भुजा में चक्र धारण करें। वाम भुजा में शङ्ख धारण करें। ये ही वैदिकों के सिद्धान्त है ॥ ८॥

ऋग्वेद में।

चमूषत् श्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुर्द्रप्स आयुधानि बिभ्रत्। अपामूर्मिंसचमानः समुद्रं तुरीयं धाम माहिषोविवक्ति अष्टक ७। अध्या ४। मण्डल ६। अनुवाक ६॥

चमूषत्श्येनः शकुनइति पक्षिविशेषः। यदि, गोविन्दुः गोविन्दस्य द्रप्सा आयुधानि अग्निनातप्तायुधानि चक्रादीन् विभृत्वा धृत्वा बिभ्रत् गच्छेत् शरीरं त्यक्त्वा इत्यर्थः अपामूर्मिं समुद्रं जलानामाकरं समुद्रं तद्वत् जन्म-मरणादिषडुर्मिमत् संसारसमुद्रं। सचमान उल्लङ्घमानः तुरीयं धाम मोक्षधाम विवक्ति गच्छति। महिषः मनुष्यः यदि चक्रादीन विभृयात्तर्हि किंवक्तव्यम्ः

भाषा—पक्षि यदि गोविन्द के अग्नि से तप्त चक्रादिको धारण कर शरीर त्याग कर जाता है तो जलों के खजाना समुद्र है, उसके तुल्य जन्म मरण ६ ऊर्मिवाला संसार समुद्र लांघते हुये मोक्ष धाम को जाता है। मनुष्य यदि चक्रादिकों को धारण करे तो क्या कहना है ॥ ६॥

ऋग्वेद वहवृचवाष्कल शाखा में।

प्रेते विष्णो अब्जचक्रे पवित्रे जन्मांभोधिं तर्तवे चर्षणीन्द्राः

मूलेवाह्वोर्दधते ऽन्पुराणा लिङ्गान्यङ्गेतावकान्यर्पयन्ति ।
शाखा ३ अनुवाक ५ ।

हेविष्णो तेतव अब्जचक्रे पद्मचक्रे पवित्रे अग्निसंतप्ते संसारनिवर्तके वा जन्मांभोधितर्तवे, जन्ममरणादि स्थान संसारसागरातितीर्षवः। चर्षणीन्द्राःचर्षणयो मनुष्या इन्दो-देवः वाह्वो मूले दधते। अन्ये पुराणाःसनकादि भृग्वादि महर्षयः हेअंगप्रेष्ठ विष्णोएतावकानि चक्रादीनि लिंगानि चिह्नानि वाह्वो मूले अपर्यन्ति अङ्कयन्ति ।

भाषा-हे विष्णो आपके पद्म चक्र को अग्नि से तप्त संसार निवर्तक जन्म मरणादिके स्थान संसारसागर तरने की इच्छा वाले मनुष्य इन्द्र देव वाहों के मूल में धारण करते हैं और सनकादि„भृग्वादिमहर्षि ने हे प्रिय विष्णो चक्रादि चिह्नों को वाहों के मूल में अङ्कित करते हैं ॥१०॥

यहां तक श्रुति प्रमाण शङ्ख चक्रादि धारण में दिखाया गया जिससे अन्धों के नेत्र पटल खुल जाय । अब पुराणादिकों के प्रमाण दिखाया जाता है ।

पद्म पुराण में ।

अग्निहोत्रं यथानित्यं वेदस्याध्यनं यथा ।
तथैवेदं ब्राह्मस्य शंखचक्रादिधारणम् ॥ ११ ॥

भाषा—ब्राह्मण के जैसे अग्नि होत्र वेद को पढ़ना नित्य कर्म है, तैसे शङ्ख चक्र धारण नित्य कर्म है ॥ ११ ॥

गरुड पुराण में ।

सर्वकर्माधिकारश्च शुचीनामेवचोदितः ।
शुचित्वं च विजानीयान्मदीयायुधधारणात् ॥ १२ ॥

भाषा—पवित्रता सर्व कर्माधिकार के लिये कहा है। भगवान् कहते हैं कि मेरा आयुध शङ्ख चक्र धारण से पवित्रता जाने,जब तक शङ्ख चक्र धारण नहीं करता है, तब तक पवित्र नहीं होता है ॥ १२ ॥

अङ्कितः शंखचक्राभ्यामुभयोर्वाहुमूलयोः ।
समर्चयेद्धरिं नित्यं नान्यथा पूजनं भवेत् ॥ १३ ॥

भाषा—दोनों वाहों के मूलों में शङ्ख चक्रों से अङ्कित पुरुष प्रति दिन हरि की पूजा को करे, शङ्ख चक्र से रहित पूजा के अधिकारी नहीं है ॥ १३ ॥

मत्स्य पुराण में ।

मच्चक्रांकितदेहो यो मद्भक्तो भुविदुर्लभः ।
नैवाप्नोति वशं मृत्योरप्याज्ञा भंग कृन्नरः ॥ १४ ॥

भगवान् कहते हैं कि, मेरे चक्र से अङ्कित देह जो मेरा भक्त है उसके दर्शन भूमि में भाग्य से होता है । इस तरह के भक्त मेरी आज्ञा भग करने वाला भी यमराज के आधीन नहीं होता है ॥ १४ ॥

वाराह पुराण में श्री सनत्कुमारजी के वचन ।

कृष्णायुधाङ्कितो देहो गोपीचन्दनमृत्स्नया ।
प्रयागादिषु तीर्थेषु सगत्वा किं करिष्यति ॥ १५ ॥

भाषा—जो शीत शङ्ख चक्र धारण करता है । गोपी चन्दन मृत्तिका से, वह कृष्ण के आयुध शङ्ख चक्र से अङ्कित देह,प्रयागादि तीर्थों में जाकर क्या करेगा, उसके प्रयागादि तीर्थों के फल हो चुका ॥ १५ ॥

पद्म पुराण में ।

कृत्वा काष्ठमयं विम्वं कृष्णशस्त्रैश्च चिह्नितम् ।
यो ह्यङ्कयति चात्मानं तत्समो नास्ति वैष्णवः ॥१६॥

भाषा—काष्ठ के विम्व वनाकर कृष्ण के शस्त्र शङ्ख चक्रों से चिह्नित कर जो अपने शरीर को अंकित करता है उसके समान वैष्णव अन्य कोई नहीं है ॥ १६ ॥

गोपीचन्दनमृत्स्नाभिर्लिखितो यस्य विग्रहः ।
शंखचक्रादिपद्मं वा देहेतस्य बसेद्धरिः ॥१७॥

भाषा-गोपी चन्दन मृत्तिका से शङ्ख चक्र वा पद्म गदा चारों से जिसके शरीर लिखित है उसके शरीर में हरि निवास करते हैं ॥ १७ ॥

ब्रह्माण्ड पुराण में ब्रह्म वाक्य।

दृष्ट्वा चक्राङ्कितं मर्त्यं मरणे समुपस्थिते।
यमदूताःप्रणश्यान्ति आगच्छन्ति हरेर्गणाः ॥१८॥

भाषा—मरण काल में चक्राङ्कित मनुष्य को देखकर यमराज के दूत भाग जाते है हरि के पार्षद् आकर ले जाते हैं ॥ १८ ॥

वामन पुराण में।

लीलायापि लिखेघस्तु बाहुमूले सुदर्शनम्।
कुलकोटिं समुद्धृत्य स गच्छेत्परमागतिम् ॥ १९ ॥

भाषा—खेल रूप से भी जो बाहु मूल में चक्र को लिखेगा वह कुलों में से कोटि मनुष्यों के उद्धार कर मोक्ष को जायगा ॥ १९ ॥

धारये द्विष्णु भक्तस्तु चक्रंबाहौ तुदक्षिणे।
वामेतु शंखराजानं वैष्णवं पद माप्नुयात् ॥ २० ॥

भाषा—विष्णु भक्त जन चक्र को दक्षिण बाहु में शंखराज को वाम बाहु में धारण करेंगे तो मोक्ष को प्राप्त होंगे ॥ २० ॥

॥ इति शीत शंखचक्र धारण निर्णयः ॥

अथ तप्त शंख चक्र धारण नियमः।

ब्रह्म पुराण में।

ब्रह्मचारीगृहस्थोपि वाणप्रस्थोऽथभिक्षुकः।
अवश्यं धारये चक्रमग्नितप्तम तन्द्रितः ॥ २१ ॥

भाषा—ब्रह्मचारी गृहस्थ वाण प्रस्थ सन्यासी वे सर्व सावधान होकर अवश्य अग्नि से तप्त चक्र धारण करैं ॥ २१ ॥

नारदीय पञ्च रात्र में।

द्वादशारं तु षट्कोणं वलयत्रयसंयुतम्।
हरेः सुदर्शनं तप्तं धारयेत्ताद्विचक्षणः ॥ २२ ॥

नारदीय पुराण में ।

श्रीकृष्णचक्रांकविहीनगात्रः श्मशानतुल्यः पुरुषोऽथ-नारी । दृष्ट्वा नरं तं नृपतिः सवासाः स्नात्वा प्रसर्पेद्धरि-मंगलाय ॥ २८ ॥

भाषा श्री कृष्ण चक्र से हीन शरीर पुरुष अथवा स्त्री, स्मशान तुल्य है उस नर को देखकर राजा वस्त्र के सहित स्नान कर भगवान् की सेवा करने के लिये जावे ॥ २८ ॥

प्रल्हाद संहिता में ।

अग्नितप्तं सदा धार्य्यं द्वारवत्यां विचक्षणैः ।
नान्यस्थाने जातु राजन् सत्यमेतद्ब्रवीमिते ॥ २९ ॥

भाषा—बुद्धिमान् अग्नि तप्त शंख चक्र द्वारिका में धारण करैं, अन्य स्थान में नहीं । हे राजन् आपसे मैं सत्य कहता हूं ॥ २९ ॥

बृहद् नारदीय में ।

चतुर्थं द्वारकास्थानं मद्धाम सुरसेवितम् ।
तत्राहं हेतिनासाध्वि तापयामि तनुं नृणाम् ॥ ३० ॥

भाषा—चतुर्थ धाम द्वारका स्थान देवों से सेवित मेरा धाम है । उस द्वारका में शङ्ख चक्रादि से हे पृथिवी मनुष्यों के शरीर मैं हीं तापता हूं ॥ ३० ॥

इससे सिद्ध होता है कि शीत शङ्ख चक्र गुरुके हाथ से दीक्षा काल में जहां चाहै वहाँ लेवे, तप्त शङ्ख चक्र द्वारका में लेवे द्वारका में किसी के हाथ से लेवे भगवान् कहते हैं कि द्वारिका में शङ्ख चक्र मैं ही देता हूं भगवान् तो गुरुवों के गुरु हैं गुरु से लेना हो चुका—

इति श्री नैष्ठिक ब्रह्मचारिणा श्री वैष्णवदास शास्त्रिणा श्री निम्बार्कपाद पाद्मान्ते वासिना हिन्दी भाषया चक्र शंख धारण द्वितीय संस्कारः संगृहीतः ॥ २ ॥

अथ तुलसी धारण निर्णयः।

पद्म स्कन्ध पुराण में।

यज्ञोपवीतवद्धार्य्या सदा तुलसी मालिका।
नाशौचं धारणे तस्या यतः सा ब्रह्म रूपिणी ॥ १ ॥

भाषा—जैसे यज्ञोपवीत निरंतर धारणीय है। यज्ञोपवीत न रहने से जल नहीं पीसकता है। तैसे तुलसी माला निरन्तर धारणीय है तुलसी माला गले में न रहने से जलपीने का अधिकार नहीं है। निरंतर धारणा करने से तुलसी अपवित्र नहीं होती है तुलसी ब्रह्म स्वरूप है॥१॥

पद्म पुराण में।

ये लग्नकण्ठतुलसीनलिनाक्षमाला
ये बाहुमूलपरिचिन्हित शंख चक्राः।
ये वा ललाटपटलेलसदूर्ध्वपुण्ड्राः
ते वैष्णवा भुवनमाशु पवित्रयन्ति ॥ २ ॥

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था-
वसुंधरा भागवती च धन्या।
स्वर्गेस्थितास्तत्पितरोपि धन्या
येषां कुले वैष्णवनामधेयम् ॥ ३ ॥

भाषा—जो कण्ठ में, तुलसी कमल के माला वाला है जो बाहु में शङ्ख चक्र वाला है जो ललाट में ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक वाला है इस तरह के वैष्णव जगत् को जल्दी पवित्र करता है॥ २ ॥ जिसके कुल में वैष्णवदीक्षा होती है उसके कुल पवित्र है माता कृतार्थ है, जहां रहता वह है पृथिवी पवित्र है स्वर्ग में रहने वाले उसके पितृगण धन्य हैं॥ ३ ॥

स्कन्द पुराण में ।

धातृफलकृतामाला तुलसीकाष्ठसम्भवा ।
दृश्यते यस्य देहे तु सवै भागवतो नरः ॥ ४ ॥

भाषा—धातृ फल की तुलसी काष्ठ की माला जिसके देह में दिखाती है वही मनुष्य वैष्णव है ॥ ४ ॥

विष्णु धर्म में भगवद् वाक्य ।

तुलसीकाष्ठमालां च कण्ठस्थां वहते तु यः ।
अप्यशौचो ह्यनाचारो मामेवैति न संशयः ॥ ५ ॥

भाषा—तुलसी काष्ठ माला को जो कण्ठमें धारण करता है, वह अपवित्र होय क्रिया से हीन होय निःसंदेह मेरे को प्राप्त होता है ॥ ५ ॥

श्री नारदपञ्चरात्र में ।

अशौचेचाप्यनाचारेकालाकालेचसर्वदा ।
तुलसीमालिकांधत्तेसजातिपरमांगतिम् ॥ ६ ॥

भाषा अशौच काल में अनाचार काल में समय असमय सर्व काल में जा तुलसी की माला धारण करता है वह मोक्ष को जाता है ॥६॥

प्रह्लाद संहिता में ।

तुलसीदलमालां तु कृष्णोत्तीर्णां तु यो वहेत् ।
यत्र तत्राश्वमेधानां दशानां लभते फलम् ॥ ७ ॥

निवेद्य केशवे मालां तुलसीकाष्ठसंभवाम् ।
यो वहेच्च नरो भक्त्या तस्य वै नास्ति पातकम् ॥ ८ ॥

कण्ठलग्ना तुया माला सा कण्ठी परिकीर्तिता ।
तस्याधारणमावश्यं कर्तव्यं द्विजसत्तमैः ॥ ९ ॥

भाषा—श्री कृष्ण के प्रसादी तुलसी पत्र माला को जो अपने गले में धारण करता है वह दश अश्वमेध फल को लाभ करता है ॥७॥

तुलसी काष्ठ की माला केशव को पहिराकर बाद प्रसादी को जो पहि-
रता है भक्ति से, वह पापों से छुटजाता है ॥ ८ ॥ जो माला कण्ठ में
लगी सटी रहती है वह माला कण्ठी कहाती हैं उस कण्ठी माला को
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य कभी न त्यागे ॥ ९ ॥

क्षालितां पञ्चगव्येन मूलमन्त्रेण मन्त्रिताम् ।
गायत्र्या चाष्टकृत्वोच्चैर्मन्त्रितांधूपितांचताम् ॥ १० ॥

तुलसीकाष्ठसम्भूतां मालां यो वहते नरः ।
तारितं च कुलं तेन यावद्रामकथा क्षितौ ॥ ११ ॥

तुलसीकाष्ठमालां तु प्रेतराजस्य दूतकाः ।
दृष्ट्वा नश्यन्ति दूरेण वातोद्भूतो यथा नरः ॥ १२ ॥

भाषा—पञ्च गव्य से स्नान कराकर गुरु मन्त्र पढ़कर । बाद-
८ बार काम गायत्री से मन्त्रित कर धूप देकर ॥ १० ॥ तुलसी काष्ठ की
बनाई माला को जो धारण करता है, वह जब तक लोक में श्री राम की
कथा रहेगी तब तक अपने कुल को तारता है ॥ ११ ॥ गले में तुलसी
काष्ठ की माला को देखकर यमके दूत दूर से भगजाते हैं । जैसे वायु
के वेग से मनुष्य दूर जाकर गिरता है ॥ १२ ॥

स्कन्द पुराण में ।

तुलसीकाष्ठमालां यो धृत्वा स्नानं समाचरेत् ।
पुष्करे च प्रयागेच स्नातंतेन मुनीश्वर ॥ १३ ॥

तुलसीकाष्ठमालांयोधृत्वाभुंक्तेद्विजोत्तमः ।
सिक्थेसिक्थेसलभतेवाजिमेधफलंमुने ॥ १४ ॥

भाषा–जो तुलसी काष्ठ माला को गले में धारण कर स्नान करता
है, हे मुनीश्वर ! उसके पुष्कर राज प्रयाग राज स्नान होचुका ॥ १३ ॥
जो तुलसी काष्ठ मालाको गलेमें धारण कर भोजन करताहै । हे द्विजोत्तम
हे मुने, वह जितने दफे ग्रास मुख में डालता है उतने अश्वमेध यज्ञ के
फल को पाता है ॥ १४ ॥

पद्म पुराण में।

स्नानकाले तु यस्याङ्गे दृश्यते तुलसीशुभा।
गंगादिसर्वतीर्थेषु स्नातं तेन न संशयः। १५॥

भाषा—स्नान काल में जिसके गले में पाप को हरण करने वाली तुलसी दिखाती है। वह निःसंशय गंगा आदि तीर्थों में स्नान कर चुका॥ १५॥

वहुनाकिमिहोक्तेनशृणुत्वंवरवर्णिनि।
विड्उत्सर्गादिकालेचनत्याजाकण्ठमालिका॥ १६॥

अन्तकालेपि यस्याङ्गे तुलसीमालिका स्पृशेत्।
तस्य देहोद्भवं पापं तत्क्षणादेव नश्यति॥ १७॥

भाषा—श्री शिवजी कहते हैं, हे पार्वति! तुलसी माला के महत्व मैं कहां तक कहूं मलमूत्र त्याग काल में भी गले में लगी हुई कण्ठी नहीं उतारनी चाहिये॥ १६॥ मरण काल में भी जिसके गले में तुलसी की माला लगी रहती है, उसके देह से उत्पन्न पाप उसी काल में छुट जाते हैं॥ १७॥

कण्ठे सिरसि वाहुभ्यां कर्णयोः करयोस्तथा।
विभृयात्तुलसीं यस्तु सज्ञेयो विष्णुना समः॥ १८॥

भाषा—कण्ठ में वाहुवों में कानों में हाथोंमें जो तुलसी की माला धारण करता है, उसको विष्णु के तुल्य जानना चाहिये॥ १८॥

यत्कंठे तुलसी नास्ति ते नरा मूढमानसाः।
अन्नं विष्ठा जलं मूत्रं पीयूषं रुधिरं भवेत्॥ १९॥

अतः सर्वेषु कालेषु धार्या तुलसीमालिका।
क्षणार्धं तद्विहीनोपि विष्णुद्रोही भवेन्नरः॥ २०॥

भाषा—जिसके कण्ठ में तुलसी नहीं है, वह अपने धर्म से पतित है। अन्न खाता है सो विष्ठा है जल पीता है सो मूत्र पीता है दूधादि

पीता है सो रक्त है ॥ १९ ॥ इसलिये सर्व काल में तुलसी धारण करनी चाहिये एक क्षण अर्ध क्षण तुलसी त्यागने से विष्णु के द्रोही मनुष्य होता है ॥ २० ॥

स्कन्द पुराण में ।

न ये विभ्रति बै मालां तुलसीकाष्ठसम्भवाम् ।
ते तु विभ्यति हि यमाद्दडहस्तात्कुमेधसः ॥ २१ ॥

भाषा—तुलसी काष्ठ की माला गले में जो नहीं धारण करता है, वह कुबुद्धि हाथ में दण्ड लिये हुये यमराज से भय खाता है ॥ २२ ॥

गरुड़ पद्म पुराण में ।

धारयन्ति न ये मालां हैतुका पापबुद्धयः ।
नरकान्ननिवर्तन्ते दग्धा कोपाग्निना हरेः ॥ २२ ॥

भाषा—तुलसी गले में धारण करना फजूल है इस तरह समझने कहने वाले पाप बुद्धि वाले तुलसी को गले में नहीं धारण करते हैं, वे हरिके कोप से जले हैं, नरक से छुट्टी नहीं पाते हैं ॥ २२ ॥ इत्यादि प्रमाणों से गले में तुलसी निरन्तर धारणीय है। दीक्षा काल में गुरु के हाथ से तुलसी धारण होय अन्यकाल अपने हाथ से ।

तुलसी गले में धारण काल प्रार्थना मन्त्र ।

तुलसीकाष्ठसम्भूते माले कृष्णजनप्रिये ।
विभर्मि त्वामहं कण्ठे कुरु मां कृष्णवल्लभम् ॥ २३ ॥

यथा त्वं वल्लभा विष्णोर्नित्यं विष्णुजनप्रिया ।
तथा मां कुरु देवेशि नित्यं विष्णुजनप्रियम् ॥ २४ ॥

भाषा—तुलसी काष्ठ से उत्पन्न श्री कृष्ण के भक्तों को प्रिय हे माले मैं आपको कण्ठ में धारण करता हूं श्री कृष्ण के प्रिय मुझको करैं ॥ २३ ॥ जैसे आप विष्णु की निरंतर बल्लभा हैं, और उनके भक्तों की प्रिया है। तैसे हे देवेशि मुझको विष्णु के विष्णु के जनके प्रिय बनावे। इन दोनों मन्त्र से प्रार्थना करनी चाहिये ॥ २४ ॥ और

दीक्षा प्रकरण और सर्व याग प्रकरण विस्तार भय से नहीं लिखा गया, दीक्षा श्री निम्बार्क कृत रहस्य षोडशी की रीती से लेनी चाहिये ।

इति श्री नैष्ठिक ब्रह्मचारिणा श्री वैष्णवदास शास्त्रिणा श्री निम्बार्कपाद पद्मान्ते वासिना हिन्दी भाषया तुलसी धारण त्रितीय संस्कारः संगृहीतः ॥३॥

॥ इति वैष्णव संस्कार कौस्तुभः ॥

श्री निम्बार्क प्रार्थना

निम्बार्क देव शरण हरण तापत्रय घनेरो ।
जे जे जन शरण गयो फिरी न ताप घेरयो ॥
अम्बरीष प्रल्हाद द्रुपजा घनेरो ।
निम्बार्क देव शरण हरण ताप त्रय घनेरो ॥
पतित पाप हरण शरण पतित हूं घनेरो ।
शरण पतित दोउ समाज आज एक तेरो ॥ निम्बार्क देव० ॥
शरण के यश शून्यौं सर्व वेद शास्त्र हेर्यो ।
पाप ताप दहन करो शरण अनल मेरो ॥ निम्बार्क देव० ॥
दीन मैं तो शरण आय जाऊं अवक तेरो ।
वैष्णवदास आस राखु शरण शरण टेरयो ॥ निम्बार्क देव० ॥

गुरु परंपरा ।

२ाधारण के मालुम होय कि आरम्भ से नीचे २ शिष्यों के नाम है, जैसे हंस भगवान् के शिष्य सनकादिक ।

१ श्री हंस भगवान्
२ ,, सनकादिक भगवान्
३ ,, नारद भगवान्
४ ,, निम्बार्क भगवान्
५ ,, श्रीनिवासाचार्य्यजी
६ ,, विश्वाचार्य्यजी
७ ,, पुरुषोत्तमाचार्य्यजी
८ ,, विलासाचार्य्य जी
९ ,, स्वरूपाचार्य्यजी
१० ,, माधवाचार्य्यजी
११ ,, वलभद्राचार्य्यजी
१२ ,, पद्माचार्य्य जी
१३ ,, स्यामाचार्य जी
१४ ,, गोपालाचार्य्य जी
१५ ,, कृपाचा ्यंजी
१६ ,, देवाचार्य्य जी

हंस सनकादिक नारद वें ३ आचार्य्य शास्त्रों में हर जगः प्रसिद्ध हैं निम्बार्क भगवान् के अवतार तिलङ्गी ब्राह्मणके गृहमें था भविष्य पुराणमें निम्बार्क भगवान् के चरित्र १ अध्याय है ।

श्री श्री निवासाचार्य्यजी से नीचे । लेकर श्री देवाचार्य्य जी तक कान कुब्ज ब्राह्मण होते आये हैं ।

श्री देवाचार्य्य जी के शिष्य

१७ श्री सुन्दरभट्टाचार्य्यजी
१८ ,, पद्मनाभभट्टाचार्य्यजी
१९ ,, उपेन्द्र भट्टाचार्य्यजी
२० ,, रामचन्द्र भट्टाचार्य्यजी
२१ ,, बामनभट्टाचार्य्य जी
२२ ,, कृष्ण भट्टाचार्य्यजी
२३ ,, पद्माकरभट्टाचार्य्यजी
२४ ,, श्रवण भट्टाचार्य्यजी
२५ ,, भूरि भट्टाचार्य्यजी
२६ ,, माधव भट्टाचार्य्यजी
२७ ,, स्यामक भट्टाचार्य्यजी
२८ ,, गोपाल भट्टाचार्य्यजी
२९ ,, बलभद्र भट्टाचार्य्यजी
३० ,गोपीनाथभट्टाचार्य्यजी
३१ ,, केशव भट्टाचार्य्यजी
३२ ,, गांगल भट्टाचार्य्यजी
३३ ,, काश्मीरी केशव भट्टाचार्य्यजी
३४ ,, श्री भट्टाचार्य्यजी

श्री सुन्दर भट्टजी से लेकर श्री श्री भट्टजी तक १८ आचार्य दक्षिणा त्यपंचद्राविड ब्राह्मण होते आये हैं।

३५ ,, हरिव्यासदेवाचार्य्यजी

श्री हरि व्यासदेवजी के साढ़े बारह शिष्यों के नाम।

१ श्री स्वभूराम देवजी
२ ,, परशराम देवजी
३ ,, बोहित देवजी
४ ,, मदन गोपालदेवजी
५ ,, उद्धव देवजी
६ ,, बाहुल देवजी
७ ,, लपरा गोपाल देवजी
८ ,, हृषीकेश देवजी
९ ,, माधव देवजी
१० ,, केशव देवजी
११ ,, गोपाल देवजी
१२ ,, मुकुन्द देवजी

श्री हरि व्यासदेवजी और उनके १२ शिष्य वे गौड़ ब्राह्मण थे।

आधा शिष्या श्री देवीजी

श्री स्वभूराम देवजी के शिष्य परंपरा–

श्री स्वभूराम देवजी के शिष्य

१ ,, कान्हर देवजी
२ ,, परमानन्द देवजी
३ ,, चतुर्चिन्तामणिदेवजी

नागाजी महाराज इनकी गद्दी भरतपुर राजधानी श्री बिहारी जी का मन्दिर है।

४ ,, गोवर्धन देवजी
५ ,, कृष्ण देवजी
६ ,, जगन्नाथ देवजी
७ ,, माखन दास जी
८ ,, चतुर दासजी
९ ,, महादास जी
१० ,, बिहारी दासजी
११ ,, नन्दराम दासजी
१२ ,, नन्द किशोर दासजी
१३ ,, उद्धवदासजी
१४ ,, सावल दासजी

श्री चतुरदासजी के शिष्य।

९ ,, भीषम दासजी
१० ,, महावीर दासजी

वर्तमान

११ पं० वैष्णव दास जी शास्त्री

स्थान कोइलादेवा–श्री चतुर्चिन्तामणि देवजी के शिष्य निवास स्थान, श्री चतुरचिन्तामणि देवजी के शिष्य।

१ श्री द्वारिका देवजी
२ ,, रन्तदेवजी
३ ,, नारायण देवजी
४ ,, पुष्कर देवजी
५ ,, लाल दासजी
६ ,, गहूवी रामदासजी
७ ,, प्रसाद रामदासजी
८ , मगनी रामदासजी
९ ,, तुहिराम दासजी
१० ,, मउनी रामदासजी
११ ,, सरयू दासजी
१२ ,, नारायण दासजी
,, रामचरण दासजी
१३ ,, नन्द किशोर शरण देवजी
१४ ,, जयराम शरणदेवजी
१५ ,, हनुमान् शरणदेवजी
१६ , रामनन्दनशरणदेवजी
१७ , हरिप्रियाशरण देवजी

वर्तमान

१८ ,, व्रजमोहन शरणदेवजी

स्थान सलेमाबाद श्री परशराम देवजी के शिष्य।

१ ,, हरि बंशदेवजी
२ ,, नारायण देवजी
३ ,, वृन्दावन देवजी
४ ,, गोविन्दशरणदेवजी
५ ,, सर्वेश्वर शरण देवजी
६ ,, निम्बार्कशरणदेवजी
७ ,, व्रजराज शरणदेवजी
८ ,, गोपेश्वर शरणदेवजी
९ ,, घनश्याम शरणदेवजी

वर्तनान

१० ,, बालकृष्णशरणदेवजी

जयपुर राज में स्थान हस्तेडा श्री परशराम देवजी के शिष्य श्री हरि बंशदेवजी उनके शिष्य।

१ श्री व्रज भूषण देवजी
२ ,, हरि कृष्णदेवजी
३ ,, ऋषी केशवदेवजी
४ ,, बेणी प्रसाद देवजी
५ ,, मनसाराम देवजी
६ ,, नरोत्तमदासजी
७ ,, लक्ष्मण दासजी
८ ,, हरि कृष्णदासजी

वर्तमान

९ ,, राधिका दासजी

सूचना।

स्थान कोइला देवा महन्त श्री व्रज मोहन शरणदेवजी की द्रव्य सहायता से यह वैष्णव संस्कार कौस्तुभ पुस्तक छपी है। आप विद्वान् हैं और स्वधर्म में निष्ठा रहती है आशा है कि इनको भगवान् शुभकार्य्य में लगाये रखेंगे। लेखक पं० श्री वैष्णव दास शास्त्री।